National Journal of
Hindi & Sanskrit Research

ISSN: 2454-9177
NJHSR 2026; 1(65): 120-122
© 2026 NJHSR
www.sanskritarticle.com

निखिल
छात्र, MA हिन्दू अध्ययन,
भारतीय पंथ मत संप्रदाय एवं सेमेटिक-धर्म अध्ययन केंद्र,हिमाचल प्रदेश केंद्रीय-विश्वविद्यालय धर्मशाला (देहरा), भारत

डॉ सोमकृष्ण
प्राध्यापक (अतिथि),
भारतीय पंथ मत संप्रदाय एवं सेमेटिक-धर्म अध्ययन केंद्र,हिमाचल प्रदेश केंद्रीय-विश्वविद्यालय धर्मशाला (देहरा), भारत

Correspondence:
निखिल
छात्र, MA हिन्दू अध्ययन,
भारतीय पंथ मत संप्रदाय एवं सेमेटिक-धर्म अध्ययन केंद्र,हिमाचल प्रदेश केंद्रीय-विश्वविद्यालय धर्मशाला (देहरा), भारत

वेदों में राष्ट्र की अवधारणा : एक समग्र चिंतन

निखिल, डॉ सोमकृष्ण

शोध सारांश

वेद भारतीय संस्कृति की आत्मा हैं। जिनमें मानव जीवन, समाज, शासन, धर्म और विश्व व्यवस्था के गहनतम सिद्धांत निहित हैं। आधुनिक काल में "राष्ट्र" की अवधारणा जहाँ राजनीतिक सीमाओं और राज्य-व्यवस्था पर आधारित है। वहीं वैदिक काल में राष्ट्र का स्वरूप सांस्कृतिक, नैतिक और आध्यात्मिक एकता पर केंद्रित रहा है। वेदों में 'राष्ट्र' शब्द केवल भूमि या शासन का पर्याय नहीं, बल्कि, सामूहिक चेतना है जो समाज, संस्कृति, धर्म और नैतिकता को एक सूत्र में बाँधती है। "राष्ट्र" शब्द की व्युत्पत्ति 'राज्' धातु हुई है। जिसका अर्थ होता है - "शासन करना, सुव्यवस्था स्थापित करना"। अतः 'राष्ट्र' भूमि और समाज का वह भाग है जहाँ राजधर्म, राज व्यवस्था, संघटन और संरक्षण के सिद्धांत एक साथ प्रकट होते हैं। वेदों में राष्ट्र को देवी स्वरूप माना है।

"अहं राष्ट्री संगमनी वसूनां चिकितुषी प्रथमा यज्ञियानाम् ।[1]

राष्ट्र केवल लोगों का समूह नहीं, बल्कि देवत्व के संरक्षण से युक्त चेतना है।

मुख्य शब्द : राष्ट्र, ऋत, धर्म, एकता, समरसता, यज्ञ, मातृभूमि, वैदिक राष्ट्रवाद, सांस्कृतिक

वेद भारतीय साहित्य,संस्कृति के मूल स्रोत ही नहीं अपितु संपूर्ण विश्ववांग्मय की अनुपम एवं अमूल्य निधि है। वेद अक्षय ज्ञान महासिंधु तथा संपूर्ण धर्म के मूल हैं।इसी कारण वेदों को सनातन ज्ञान का भंडार कहा गया है,जो शाश्वत है,अक्षय है,अनंत है। इस अक्षय ज्ञान राशि से जो अनविज्ञ होता है,वह कुछ भी नहीं जानता।जहाँ वेदों में जीवनोपयोगी सिद्धांतों एवं उपदेशों का वर्णन प्रस्तुत है,तो वहीँ वेदों में ही साक्षात् विश्वकल्याण एवं विश्वबंधुत्व के प्रतिबिंब दिखाई देते हैं।

अयं निजः परो वेति गणना लघुचेतसाम्।
उदारचरितानां तु वसुधैव कुटुम्बकम्॥[2]

'माता भूमि पुत्रोऽहं पृथिव्या'[3]

राष्ट्र को उन्नत करने के लिए यही राष्ट्रीय भावना अनादिकाल से उत्कृष्ट रही है। यह पृथ्वी सभी वैचारिक विमर्श से भिन्न होकर प्राणी जगत को अपने में इस प्रकार धारण करती है मानो सभी एक ही कुटुंब के अभिन्न अंग हों। वेदवाक्य देशभक्ति,राष्ट्रप्रेम, समाजसेवा के प्रेरक हैं। वेदों में राष्ट्रीय भावना का उत्कृष्ट वर्णन विद्यमान है।

संगच्छध्वं संवदध्वं सं वो मनांसि जानताम् ।
देवा भागं यथा पूर्वे सञ्जानाना उपासते ॥[4]
समानो मन्त्र: समिति: समानी समानं मन: सह चित्तमेषाम्
समानं मन्त्रमभि मन्त्रये व: समानेन वो हविषा जुहोमि ।।[5]

समानी व आकूतिः समाना हृदयानि वः ।

समानमस्तु वो मनो यथा वः सुसहासति ।।[6]

अपने राष्ट्र की रक्षा के अनेक दृष्टांत वेदों में निहित हैं।

"वयं राष्ट्रे जागृयाम पुरोहिताः ।।[7]

मातृभूमि की सेवा, मातृत्व का भाव आदि उद्घोष वेदों में स्पष्ट रूप से उल्लिखित हैं।

'उप सर्प मातरम् भूमिम् एताम् उरुव्यचसम् पृथिवीं सुशेवाम्'[8]

'नमो मात्रे पृथिव्ये, नमो मात्रे पृथिव्या:'[9]

अथर्ववेद के पृथ्वी सूक्त में साक्षात् वेद भगवान ने अपनी 'मातृभूमि' के प्रति मातृत्व भाव तथा इसका रक्षण,पोषण करने का उपदेश किया है।

सा नो भूमि विं सृजतां माता पुत्राय मे पय:[10]

भूमे मार्तनि धेहि मा भद्रया सुप्रतिष्ठितम्[11]

सहृदयं सामनस्य माविद्वेषं कृणोमि वः।

अन्योअन्यम मिहर्यत वत्सं जात मिवाहन्या॥[12]

उपस्थास्ते अनमीवा अयक्ष्मा अस्मभ्यं सन्तु पृथिवि प्रसूताः ।

दीर्घं न आयुः प्रतिबुध्यमाना वयं तुभ्यं बलिहृतः स्याम॥[13]

पृथ्वी को संरक्षित करने वाले सत्य आदि विशिष्ट तत्वों का वर्णन वेदों में प्राप्त होता है। ये तत्व ही पृथ्वी को धारण करते हैं।इसमें सत्य, कर्म, सत्य, ज्ञान, दीक्षा, ब्रह्मचर्य, तप, यज्ञ, दान आदि प्रमुख रूप से विद्यमान हैं ।

सत्यं बृहदृतमुग्रं दीक्षा तपो ब्रह्म यज्ञः पृथिवीं धारयन्ति ।

सा नो भूतस्य भव्यस्य पत्न्युरुं लोकं पृथिवी नः कृणोतु ॥[14]

विश्व शांति का उद्घोष वेदों में राष्ट्र शांति का ही प्रेरक रहा है। राष्ट्र सुजल व सफल रहे इस हेतु समस्त देवताओं से प्रार्थना की गई है। इसी को ही ऋषियों ने विश्व मंगलकामना कहा है।

ॐ द्यौः शान्तिरन्तरिक्षं शान्तिः पृथिवी शान्तिरापः शान्तिरोषधयः शान्तिः । वनस्पतयः शान्तिर्विश्वेदेवाः शान्तिर्ब्रह्म शान्तिः सर्वं शान्तिः शान्तिरेव शान्तिः सा मा शान्तिरेधि ॥

इस मंत्र में राष्ट्र में आने वाले सभी घटकों के लिए शांति प्रदान करने की प्रार्थना की गई है। राष्ट्र को उत्कृष्ट व उन्नत बनाने के लिए राजा के साथ-साथ प्रजा को भी उत्तरदायी माना है।

भद्रमिच्छन्त ऋषयः स्वर्विदः तपो दीक्षामुपनिषेदुरग्रे।

ततो राष्ट्रं बलमोजश्च जातं तदस्मै देवा उपसंनमन्तु॥[15]

राष्ट्र की वैदिक अवधारणा वस्तुतः एक विशाल कुटुंब की भावना पर आधारित है। जिसमें प्राणी मात्र के प्रति उदार भावना का समुचित समावेश है। यजुर्वेद में कहा गया है –

यस्तु सर्वाणि भूतानि आत्मनि एव अनुपश्यति च ।

सर्वभूतेषु आत्मानम् ततो न विजुगुप्सते ॥[16]

वेद राष्ट्र की उन्नति के लिए ज्ञान-कर्म की उपासना के नैतिक निर्देशों की अनुपालना का उपदेश करते हैं।

एतद्देशप्रसूतस्य सकाशादग्रजन्मनः।

स्वं स्वं चरित्रं शिक्षेरन् पृथिव्यां सर्वमानवाः॥[17]

मानवीय कर्तव्यों की अभिव्यक्ति मनु ने सैद्धांतिक तत्वों के आधार पर की है –

वेदोऽखिलो धर्ममूलं स्मृतिशीले च तद्विदाम् ।

आचारश्चैव साधूनां आत्मनस्तुष्टिरेव च ।[18]

वेदों में राष्ट्र के लिए अर्थेत शब्द आया है। जिसका अर्थ होता है एक विशिष्ट उद्देश्य से चलने वाला।

अर्थेत स्थ राष्ट्रदा राष्ट्रं मे दत्त स्वाहार्थेत स्थ राष्ट्रदा राष्ट्रममुष्मै[19]

भारतीय संस्कृति में राष्ट्र भावना सर्वोपरि है। इसलिए वेदों में राष्ट्र संवर्धन का अनेक बार उपदेश किया गया है।

अथर्ववेद में तो राष्ट्र कल्याण के लिए पृथ्वी से प्रार्थना की गई है विविध भाषा भाषीय,विभिन्न मतावलंबी तथा विभिन्न प्रकार के लोगों को धारण करने वाली पृथ्वी गाय के समान अनेक धन धाराओं को प्रवाहित करें।

जनं बिभ्रती बहुधा विवाचसं नानाधर्माणं पृथिवी यथौकसम् ।

सहस्र धारा द्रविणस्य मे दुहां ध्रुवेव धेनुरनपस्फुरन्ती ॥[20]

वैदिक संपूर्ण वैदिक वाङ्मय में राष्ट्र का विस्तृत वर्णन किया गया है। इसमें आदर्श जीवन शैली की संकल्पना में व्यक्तिगत तथा सामाजिक जीवन का बोध तथा आदर्श गुणों के वर्णन के साथ ऐसे सशक्त व शाश्वत राष्ट्र की कल्पना की गई है, जहां केवल कुछ गिने चुने तत्वों में ही एकरूपता तथा सामानता नहीं दिखती बल्कि राष्ट्र के सदस्यों के मानचित्र हृदयों में समान विचारों से उत्प्रोत तथा समाज जीवन में सभी एक दूसरे के सहायक व सहयोगी बताए हैं।

अथर्ववेद तो राष्ट्रोत्थान की सर्वोत्तम कृति मानी गई है,चूंकि इसका पृथ्वी सूक्त राष्ट्र भावना को ही समर्पित है। अथर्ववेद को राष्ट्र निर्माण का ग्रंथ यदि कहा जाए तो इसमें कोई अतिशयोक्ति नहीं।

राष्ट्र का राष्ट्र नायक कैसा हो? उसका अपनी प्रजा के प्रति क्या कर्तव्य है? इसका उपदेश अथर्ववेद के 11 कांड के नवें सूक्त में विस्तृत रूप से किया गया है।

वैदिक संहिताओं ने राष्ट्रभक्ति के स्वर यत्र तत्र सर्वत्र गुंजायमान किए हैं। भारतीय संस्कृति में नैतिक मूल्यों के अंतर्गत राष्ट्रीयता को सर्वोच्च मूल्य के रूप में मान्यता प्राप्त है। महापुरुषों ने इस राष्ट्र को देवता कहा गया है।

राष्ट्र देवो भव।

मानव राष्ट्र का ऋणी है अतः राष्ट्र के प्रति मानव के स्वकर्तव्य तथा अपनी अगाध निष्ठा समीचीन है। यजुर्वेद में राष्ट्र के आदर्श गुणों का वर्णन आया है-

स्वराजस्थ (राष्ट्र स्वतंत्र होना चाहिए), जनभृतस्थ(समाजहितकारी होना चाहिए), विश्वभृतस्थ(विश्व की मंगल कामना के लिए प्रयत्नशील होना चाहिए)[21]

वेद का यह मंत्र हमें राष्ट्र के प्रति अपने कर्तव्य और उत्तरदायित्व का बोध कराने के साथ साथ राष्ट्र की सर्वांगीण उन्नति का बोध वाक्य है।

आ ब्रह्मन् ब्राह्मणो ब्रह्मवर्चसी जायताम् आ राष्ट्रे राजन्यः शूर ऽ इषव्यो ऽतिव्याधी महारथो जायतां दोग्ध्री धेनुर् वोढानड्वान् आशुः सप्तिः पुरंधिर् योषा जिष्णू रथेष्ठाः सभेयो युवास्य यजमानस्य वीरो जायतां निकामे-निकामे नः पर्जन्यो वर्षतु फलवत्यो न ऽ ओषधयः पच्यन्तां योगक्षेमो नः कल्पताम् ॥[22]

सर्वांगीणविकास से अभिप्राय वेदों में ब्राह्मण तेजी युक्त शक्ति संपन्न शत्रुओं का संहार करने में सक्षम गोधन आदि दुग्धदायी, भरवाहक भारवाही, सुभग नारी राष्ट्र को बढाने वाली, मेघ वर्षा करने वाले, वनस्पतियां फल वाली हो।

राष्ट्र की अवधारणा और वसुदैव कुटुम्बकं की भावना पृथ्वी सूक्त ही विकसित करता है। ऋषियों ने इस पृथ्वी उक्त को प्राणियों का घर माना है।

वेनस्तत्पश्यन्निहितं गुहा सद्यत्र विश्वं भवत्येकनीडम्।
तस्मिन्निद सं च वि चैति सर्व स ओतः प्रोतश्च विभूः प्रजासु।।[23]

ऋग्वेद का नदी सूक्त राष्ट्रीय एकता का द्योतक दिखाई पड़ता है।

इमम् मे गङ्गे यमुने सरस्वति शुतुद्रि स्तोमं सचता परुष्ण्य् आ |
असिक्न्या मरुद्वृधे वितस्तयार्जीकीये शृणुह्य् आ सुषोमया ||[24]

वेदों में परस्पर ईर्ष्या और देश का भाग नहीं दिखता है ऋग्वेद के अग्नि सूक्त में इन भागों को स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है जहां अग्नि देव से प्रार्थना की गई है-

स नः पितेव सूनवेऽग्ने सूपायनो भव । सचस्वा नः स्वस्तये ॥[25]

वैदिक राष्ट्र की व्यापक अवधारणा ही हमारे जीवन को सर्वांगपूर्ण बना सकेगी। मात्र स्वयं के हित की कामना न करते हुए सम्पूर्ण विश्व के कल्याण की कामना ही वैदिक राष्ट्र की वास्तविक अभिव्यक्ति है। जब वेद कहता है 'कृण्वन्तो विश्वमार्यम्' तो इसका तात्पर्य किसी वर्गविशेष से नहीं अपितु समस्त विश्व के कल्याण से है। अतः आइये हम ऐसे ही राष्ट्रवाद के पोषक और प्रेरक बनें... विश्व के कल्याण में अपने हित को देखें... स्वार्थभाव से विमुख हो परमार्थ भाव का चिन्तन करें, तब ही हम राष्ट्र के स्वरूप और उसकी शक्ति से सच्चे अर्थों में अवगत हो सकेंगे।

संदर्भ ग्रन्थ-

1. मनुस्मृति,मनुस्मृति प्रभात प्रकाशन,नई दिल्ली, 2020 प्रथम संस्करण
2. ऋग्वेद संहिता,विश्व बुक प्राइवेट लिमिटेड 2017
3. अथर्ववेद संहिता,विश्व बुक प्राइवेट लिमिटेड 2017
4. वेदों में विज्ञान - विश्व भारती अनुसंधान परिषद ज्ञानपुर उत्तर प्रदेश।
5. वैदिक साहित्य एवं संस्कृति - डॉ कपिल देव द्विवेदी, विश्वविद्यालय प्रकाशन वाराणसी।
6. सामवेद संहिता, पं श्रीपाद दामोदर सातवलेकर नाग प्रकाशन
7. यजुर्वेद संहिता, पंडित ईश्वर चंद्र

संदर्भ

1. ऋग्वेद 10/125/3
2. हितोपदेश (वैश्विककरण का वैदिक स्वरूप कथामुख)
3. अथर्ववेद 12/1/12
4. संज्ञान सूक्त 10/121/2
5. ऋग्वेद 10/191/3
6. ऋग्वेद 10/191/4
7. यजुर्वेद 9/23
8. ऋग्वेद10/1810
9. यजुर्वेद 9/22
10. अथर्ववेद12/1/10
11. अथर्ववेद12/1/3
12. अथर्ववेद3/30/1
13. वैश्विककरण का वैदिक स्वरुप पृष्ठ.६७
14. अर्थववेद12/1/1
15. अर्थववेद 19/41/1
16. यजुर्वेद 40/6
17. मनुस्मृति 2/20
18. मनुस्मृति 2/6
19. यजुर्वेद 10/3
20. अथर्ववेद 12/1/3
21. यजुर्वेद 10.4
22. जुर्वेद22/22
23. यजुर्वेद22/9
24. ऋग्वेद 10/75/5
25. ऋग्वेद1/1/9